Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 3 | Issue 3 | (July - September 2026)

शिवपुराण में वर्णित प्रभु स्मरण के भक्ति सिद्धांत का अनुशीलन

रोहिणी शर्मा [1], डॉ. पाडुर् सुब्रमण्य शास्त्रीगल [2]

[1] पी.एच.डी. शोधार्थिनी, संस्कृत एवं वैदिक-ज्योतिष अध्ययन विभाग, संस्कृति विश्वविद्यालय, मथुरा, उत्तर प्रदेश

[2] विभागाध्यक्ष, संस्कृत एवं वैदिक-ज्योतिष अध्ययन विभाग, संस्कृति विश्वविद्यालय, मथुरा, उत्तर प्रदेश

शोध-सार

प्रस्तुत शोध-पत्र में शैव मतावलंबियों के प्रामाणिक एवं वाङ्मय ग्रंथ शिवपुराण में वर्णित प्रभु स्मरण के भक्ति सिद्धांत का दार्शनिक, शास्त्रीय एवं व्यावहारिक अनुशीलन किया गया है। भारतीय मनीषा में भक्ति को परम पुरुषार्थ मोक्ष की प्राप्ति का सर्वसुलभ एवं श्रेष्ठतम साधन स्वीकार किया गया है। शिवपुराण के अनुसार परमशिव ही संपूर्ण जगत् के उपादान एवं निमित्त कारण हैं। अविद्या के कारण सांसारिक बंधनों में जकड़े जीव की मुक्ति हेतु प्रभु स्मरण को अत्यंत प्रभावशाली एवं वैज्ञानिक उपकरण माना गया है। स्मरण केवल किसी नाम का वाचिक उच्चारण मात्र नहीं है, बल्कि यह चित्त को बाह्य प्रपंचों से समेटकर अंतर्मुखी करने की एक सुव्यवस्थित आध्यात्मिक प्रक्रिया है। शोध-पत्र में विद्येश्वर संहिता के आधार पर भक्ति के सगुण व निर्गुण स्वरूपों तथा श्रवण, कीर्तन एवं मनन रूपी 'त्रिधा-साधन सिद्धांत' की सूक्ष्म व्याख्या की गई है। इसके अनुसार श्रवण से भक्ति-बीज का रोपण होता है, कीर्तन से वह अंकुरित होता है और मनन या निरंतर स्मरण से परिपक्व होकर सायुज्य मुक्ति रूपी फल प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, नाम-स्मरण, त्रिस्तरीय जप-साधना तथा सगुण ध्यान से लेकर शिवोऽहम् की अद्वैत भावना तक की क्रमिक आध्यात्मिक यात्रा का प्रामाणिक विवेचन किया गया है। आलेख में अद्वैत वेदांत के निर्वाणषट्कम् तथा कश्मीरी शैव दर्शन के सिद्धांतों के समन्वय से यह सिद्ध किया गया है कि शिव-स्मरण जीव को उसकी सीमित दैहिक पहचान से मुक्त कराकर अखंड आनंदमय चेतना का बोध कराता है।

बीज शब्द: शिवपुराण, भक्ति सिद्धांत, प्रभु स्मरण, त्रिधा-साधन, पंचाक्षर मंत्र, शिवोऽहम्, सायुज्य मुक्ति।

प्रस्तावना

भारतीय मनीषा में भक्ति को परम पुरुषार्थ मोक्ष की प्राप्ति का सर्वसुलभ एवं श्रेष्ठतम साधन स्वीकार किया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता एवं नारदभक्तिसूत्र से लेकर पौराणिक साहित्य तक भक्ति के विविध आयामों की सांगोपांग विवेचना मिलती है। 18 महापुराणों में परिगणित शिवपुराण शैव मत का प्रामाणिक एवं वाङ्मय स्वरूप है। शिवपुराण के अनुसार, जगत् का उपादान और निमित्त कारण स्वयं परमशिव हैं। जीव का अविद्या के कारण इस संसार में बाध्य होना और उससे मुक्ति पाना ही अध्यात्म का मुख्य ध्येय है। इस मुक्ति मार्ग में प्रभु स्मरण को सबसे प्रभावशाली उपकरण माना गया है। स्मरण केवल किसी नाम का उच्चारण मात्र नहीं है, अपितु यह साधक के चित्त को बाह्य प्रपंचों से समेटकर अंतर्मुखी करने की एक वैज्ञानिक एवं दार्शनिक प्रक्रिया है।

शिवपुराण में भक्ति का तात्त्विक स्वरूप

शिवपुराण में भक्ति का विशद विवेचन किया गया है। यह पुराण भक्ति को मुख्य रूप से दो कोटियों में विभाजित करता है:

सा भक्तिर्द्विविधा देवि सगुणा निर्गुणा मता॥

वैधी स्वाभाविकी या या वरा सा त्ववरा स्मृता॥[1]

इस श्लोक के आलोक में भक्ति के द्विविध स्वरूप में प्रथम रूप सगुण भक्ति है। इस प्रकार की भक्ति का सीधा संबंध भगवान शिव के साकार रूप, लीलाओं और प्रतीकात्मक स्वरूपों से है। जब साधक ईश्वर को नाम, रूप, गुण और विविध रूपों में अंगीकार कर साधना करता है, तो वह सगुण भक्ति कहलाती है। इसके अंतर्गत शिव-पार्वती की युगल प्रतिमाओं का पूजन, शिवलिंग का षोडशोपचार अर्चन, जलाभिषेक, वंदन, स्तोत्र-गान एवं साकार रूप का ध्यान सम्मिलित है। प्रारम्भिक अवस्था में यह वैधी भक्ति होती है, जहाँ साधक शास्त्रों में वर्णित नियमों, मंत्रों, तिथियों और बाह्य अनुष्ठानों के अनुशासन में रहकर पूजा-अर्चना करता है। यह साधना चित्त के मलों को धोने तथा साधक के मन को चंचलता से हटाकर ईश्वर में एकाग्र करने की प्राथमिक सीढ़ी है।

भक्ति का दूसरा रूप निर्गुण भक्ति है। सगुण साधना से जब साधक का अंतःकरण शुद्ध हो जाता है, तब वह निर्गुण भक्ति की ओर अग्रसर होता है। निर्गुण भक्ति शिव के निराकार, शून्यातीत, सच्चिदानंद एवं गुणातीत स्वरूप का सतत अनुसंधान और स्मरण है। इसमें किसी बाह्य मूर्ति, लिंग या अनुष्ठान की आवश्यकता नहीं रह जाती। साधक अपने ही हृदय-कमल में विद्यमान परमशिव-तत्त्व का निरंतर अनुचिंतन करता है। यह भक्ति स्वाभाविकी या रागानुप्राणित होती है, जहाँ भक्ति किसी भय, नियम या विधि के कारण नहीं, बल्कि आत्मा के निज-स्वरूप के प्रति स्वाभाविक और अविच्छिन्न प्रेम के रूप में स्वतः प्रवाहित होती है। कश्मीरी शैव दर्शन की शब्दावली में इसे अनन्य अनुरागात्मकता कहा जाता है, जहाँ साधक की समस्त इंद्रियाँ अपने-अपने विषयों से सिमटकर केवल शिव-तत्त्व में ही विश्राम पाती हैं।

शिवपुराण की सबसे बड़ी दार्शनिक विशेषता यह है कि यह सगुण और निर्गुण के बीच कोई विरोध या द्वैत खड़ा नहीं करता। यह स्पष्ट करता है कि सगुण भक्ति ही निर्गुण बोध का प्रवेश द्वार है। लिंग पूजन या प्रतिमा ध्यान रूपी सगुण रूप में मन को स्थिर किए बिना शून्यातीत निराकार ब्रह्म की उपलब्धि असंभव है। जब साकार ध्यान परिपक्व होता है, तब नाम और रूप का भेद मिट जाता है और साधक अद्वैत स्थिति में पहुँचकर शिवोऽहम् का अनुभव करने लगता है। संक्षेप में, शिवपुराण में वर्णित भक्ति का यह सिद्धांत कर्म और ज्ञान का अद्भुत समन्वय है। सगुण भक्ति जहाँ साधक के चित्त की शुद्धि और अनुशासन का आधार बनती है, वहीं निर्गुण भक्ति उसे अज्ञानरूपी संसार से मुक्त कराकर परमशिव के साथ परम मिलन प्रदान करती है। यही कारण है कि शिवपुराण का यह भक्ति सिद्धांत केवल पौराणिक अनुष्ठान न होकर आत्म-साक्षात्कार की एक सर्वमान्य, सुगम और प्रामाणिक दार्शनिक पद्धति है। शैव दर्शन में भक्ति को अनन्य अनुरागात्मकता कहा गया है। रुद्र संहिता के अनुसार जब साधक की समस्त इंद्रियाँ अपने विषयों से हटकर केवल शिवतत्त्व में लीन हो जाती हैं, तब वह स्थिति सच्ची भक्ति की परिचायक बनती है।

त्रिधा-साधन सिद्धांत

विद्येश्वर संहिता के अध्याय 2 से 5 में शौनकादि ऋषियों ने सूत जी से प्रश्न किया कि कलियुग में पाप कर्मों में लिप्त जीव किस प्रकार भगवान शिव के परम पद को प्राप्त कर सकता है? इसके उत्तर में सूत जी ने त्रिविध साधनों का वर्णन किया। इन्हें त्रिधा-साधन सिद्धांत कहा जाता है:

श्रवणं कीर्तनं शंभोर्मननं च महत्तरम्।

त्रयं साधनमुक्तं च विद्यते वेदसंमतम्॥[2]

श्रवण से आशय शिव-लीला, महिमा और नाम को श्रद्धापूर्वक सुनने से है। कीर्तन का अर्थ प्रभु के नाम, गुणों, महिमा, मंत्र तथा स्तोत्रों का वाणी से निरंतर गान या उच्चारण करना है। जबकि श्रुत एवं कीर्तित तत्त्व का निरंतर, अविच्छिन्न अनुचिंतन करने को मनन कहते हैं। शिवपुराण का भाव यह है कि श्रवण से बीज रोपित होता है, कीर्तन से वह अंकुरित होता है, और मनन या स्मरण से वह परिपक्व होकर मोक्षरूपी फल प्रदान करता है। इसी से सायुज्य मुक्ति प्राप्त होती है:

मननेन भवेन्मुक्तिः सायुज्याख्या न संशयः।

तस्मात्तत्त्रितयं कार्यं शिवप्रीत्यै विचक्षणैः॥[3]

विद्येश्वर संहिता के अध्याय तीन के अंतिम श्लोक में सूत जी कहते हैं:

श्रवणं कीर्तनं चैव मननं च महेश्वर।

एतत्त्रयं महासाधं शिवप्राप्तौ सनातनम्॥[4]

श्रवण, कीर्तन और मनन—ये तीनों ही महेश्वर शिव की प्राप्ति के सनातन और महा-साधन हैं। जो जीव निष्काम भाव से इनका आश्रय लेता है, वह निःसंदेह शिवलोक को प्राप्त होता है। क्योंकि कलियुग में मनुष्य का चित्त चंचल, आयु अल्प और साधन सीमित हैं। ऐसे समय में कठिन तप, कठिन यज्ञ या क्लिष्ट योग साधना हर किसी के लिए संभव नहीं है। इसीलिए सूत जी ने शौनकादि ऋषियों को संबोधित करते हुए भगवान शिव द्वारा बताए गए इन तीन सनातन महा-साधनों की महिमा बताई है।

ये साधना की तीन क्रमिक सीढ़ियाँ हैं। यह साधना की परिपक्व और उच्चतम अवस्था है। केवल सुन लेने या जीभ से नाम ले लेने मात्र से अंतःकरण का संशय दूर नहीं होता, जब तक कि मन उस तत्त्व को स्वीकार न कर ले। मनन के दौरान साधक भाव करता है: "संसार नश्वर है, केवल शिव ही एकमात्र सत्य हैं। शिवोऽहम्—मैं और शिव अलग नहीं हैं।" इससे अज्ञानरूपी आवरण पूरी तरह नष्ट हो जाता है और साधक को सायुज्य मुक्ति प्राप्त होती है।

प्रभु स्मरण स्वरूप

शिवपुराण में प्रभु स्मरण के बहुआयामी स्वरूप का वर्णन मिलता है। स्मरण की प्रक्रिया को मुख्य रूप से तीन स्तरों पर वर्गीकृत किया गया है। इसका प्रथम सोपान नाम-स्मरण है। शिवपुराण का कथन है कि शिव का नाम केवल एक शब्द नहीं, अपितु स्वयं शिव का वाचक-सामर्थ्य है। विद्येश्वर संहिता के सत्रहवें अध्याय में 'ॐ नमः शिवाय' तथा शिव-नाम की वाचकता का प्रतिपादन करते हुए कहा गया है:

वाच्यो महेशः सम्प्रोक्तो वाचकः प्रणवः स्मृतः।

वाच्यवाचकयोर्भेदो नास्त्येव परमार्थतः॥[5]

परमेश्वर शिव वाच्य हैं और शिव-नाम उनका वाचक है। तात्त्विक दृष्टि से वाच्य और वाचक में कोई भेद या अंतर नहीं है। इसी संदर्भ में विद्येश्वर संहिता में शिव-नाम के सामर्थ्य के बारे में कहा गया है:

शिवनामामृत रसो रसज्ञायां विराजते।

तद्भवत्येव शिवता न संशयः॥[6]

भगवान शिव का नाम केवल एक शब्द नहीं है, बल्कि साक्षात शिवत्व का प्रदाता है। नाम के उच्चारण मात्र से साधक में शिव-सामर्थ्य का आधान होता है।

शिव शब्द का अर्थ ही कल्याणप्रद है।[7] अज्ञानवश अथवा ज्ञानपूर्वक, किसी भी स्थिति में किया गया शिव-नाम का उच्चारण पापों का नाश करता है। इसका दूसरा सोपान मंत्र-स्मरण एवं जप-साधना है। शिवपुराण की विद्येश्वर संहिता के अध्याय सत्रह में पंचाक्षर मंत्र को सर्ववेदानामुत्तमम् अर्थात् समस्त वेदों का सार माना गया है। इसमें पंचाक्षर स्मरण के तीन प्रकार बताए गए हैं: [8]

स्पष्ट वाणी से मंत्र का उच्चारण करना वाचिक स्मरण कहलाता है। केवल स्वयं को सुनाई देने योग्य मंद उच्चारण उपांशु स्मरण है, जबकि जिह्वा या कण्ठ को हिलाए बिना केवल मन के भीतर अविच्छिन्न धाराप्रवाह स्मरण करना ही मानसिक स्मरण है। यही स्मरण श्रेष्ठतम है।

स्मरण का उच्चतर रूप ध्यान है, जिसमें साधक भगवान शिव के मंगलमय स्वरूप—गंगाधर, चंद्रमौली, नीलकंठ अथवा ज्योतिर्लिंग—का अपने हृदय-कमल में ध्यान करता है:

हृत्पद्मे कर्णिकामध्ये ध्यायेद्देवं सदाशिवम्।

गंगाधरं चन्द्रमौलिं नीलकण्ठं त्रिलोचनम्॥[9]

सगुण स्वरूप के निरंतर ध्यान के पश्चात् जब मन पूर्णतः तन्मय हो जाता है, तब शिवोऽहम् भाव-स्मरण जागृत होता है, जो अद्वैत बोध की पराकाष्ठा है। कैलाश संहिता में इसका स्पष्ट उल्लेख मिलता है:

अहमेव शिवः साक्षाच्छिव एवाहमुत्तमः।

इति भावयित्वा सततं शिवोऽहमिति चिन्तयेत्॥[10]

अर्थात् मैं ही साक्षात शिव हूँ और शिव ही सर्वोत्कृष्ट मैं हूँ—इस प्रकार निरंतर भावना करते हुए साधक शिवोऽहम् का निरंतर स्मरण करे।

शिवोऽहम् केवल एक धार्मिक मंत्र या ईश्वर की पूजा का वाक्य नहीं है, बल्कि यह अद्वैत वेदांत और कश्मीरी शैव दर्शन का वह उच्चतम सत्य है, जो मनुष्य को उसकी सीमित दैहिक पहचान से मुक्त कराकर उसके वास्तविक, अनंत और अखंड स्वरूप का बोध कराता है। यहाँ शिव शब्द का अर्थ कैलाश पर निवास करने वाले आकार-युक्त पौराणिक देवता मात्र से नहीं है, बल्कि इस शब्द का अर्थ है—वह परम चेतना जो समस्त ब्रह्मांड में व्याप्त है, वह जो सर्वथा पवित्र, अपरिवर्तनशील और आनंदमय है तथा जो सत, चित्त और आनंद है। शिवोऽहम् साधक को यह अनुभव कराता है कि मैं यह नश्वर शरीर, चंचल मन या बुद्धि नहीं हूँ; मैं वह परम शुद्ध, सनातन और आनंदमय शिव-स्वरूप चेतना हूँ।

आदि शंकराचार्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ निर्वाणषट्कम् में शिवोऽहम् के अर्थ को स्पष्ट किया है। उन्होंने छह छंदों में यह बताया है कि मैं क्या नहीं हूँ और अंत में अपना वास्तविक स्वरूप शिवोऽहम् घोषित किया—

चिदानन्दरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम्॥[11]

कश्मीरी शैव दर्शन के अनुसार भगवान शिव ने अपनी स्वेच्छा से स्वयं को संकुचित करके जीव का रूप धारण किया है।[12] अज्ञानता के कारण जीव यह भूल जाता है कि वह शिव है। जब साधक अपनी साधना, ध्यान और गुरु कृपा से अपने निज-स्वरूप को पहचान लेता है कि मैं ही शिव हूँ, तो इसे ही शिवोऽहम् या मोक्ष कहा जाता है।[13]

प्रभु स्मरण के फल

शिवपुराण केवल भक्ति की महत्ता का गान करने वाला ग्रंथ नहीं है, अपितु यह मानव चेतना के रूपांतरण की एक गहन वैज्ञानिक और दार्शनिक नियमावली है। शिवपुराण की विद्येश्वर संहिता में प्रभु स्मरण के बहुआयामी सतत् अभ्यास से प्राप्त होने वाले फलों का क्रमिक विवेचन मिलता है। यहाँ स्मरण को केवल किसी बाह्य नाम के तोते की तरह रटने के रूप में नहीं, बल्कि चित्त को संसार के प्रपंचों से समेटकर अंतर्मुखी करने की एक चित्त-शोधक प्रक्रिया माना गया है। इस साधना के फल को दो मुख्य धरातलों पर समझा जा सकता है—मानसिक सुधार तथा आत्यंतिक मुक्ति। जब साधक निरंतर शिव-नाम, मंत्र अथवा उनके स्वरूप का अनुचिंतन करता है, तो उसके अंतःकरण में जमा विकार धीरे-धीरे शांत होने लगते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर—ये छह विकार मन के वे मल हैं, जो विवेक को ढक देते हैं। स्मरण की प्रक्रिया मन के भीतर उठने वाली व्यर्थ और नकारात्मक विचार-तरंगों को नियंत्रित करती है। जैसे अग्नि के संपर्क में आने से ईंधन भस्म हो जाता है, ठीक उसी प्रकार परमशिव का स्मरण साधक के मानसिक विकारों का शमन कर चित्त को परम निर्मलता प्रदान करता है।

मन की चंचलता का अंत एवं एकाग्रता: साधारण अवस्था में मनुष्य का मन विषयों और वासनाओं के पीछे भटकता रहता है। स्मरण साधना मन को एक आलंबन प्रदान करती है। निरंतर अभ्यास से मन की बिखरी हुई शक्तियाँ सिमटकर केंद्रित होने लगती हैं। इससे चित्त में स्थिरता, अंतर्मुखता और एकाग्रता का प्रादुर्भाव होता है। यही एकाग्रता आगे चलकर समाधि-स्थिति का निर्माण करती है, जहाँ साधक बाह्य जगत के द्वंद्वों से परे शांत और अविचल स्थिति को प्राप्त करता है।

शिवपुराण प्रतिपादित करता है कि शिव-स्मरण में वह सामर्थ्य है जो पूर्वजन्मों के संचित कर्म-बंधनों को शिथिल कर देता है। स्मरण के प्रभाव से अज्ञान-जनित कुसंस्कारों का क्षय होने लगता है, जिससे जीव कर्म-बंधन से मुक्त होने की ओर अग्रसर होता है। स्मरण साधना की अंतिम परिणति जीव और ब्रह्म के भेद के मिट जाने में है। प्रारंभ में साधक दास या भक्त भाव से स्मरण करता है, परंतु जैसे-जैसे ध्यान और स्मरण परिपक्व होता है, ध्याता और ध्येय का अंतर समाप्त हो जाता है। साधक को यह अद्वैत बोध होता है कि उसका निज-स्वरूप ही शिव है। इस स्थिति में जीवत्व का अंत हो जाता है और उसे सायुज्य मुक्ति या शिवत्व की प्राप्ति होती है। विद्येश्वर संहिता में वर्णित प्रभु स्मरण के फल केवल पारलौकिक मोक्ष तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे इहलौकिक जीवन में भी मानसिक स्वास्थ्य, आंतरिक संतुलन और परम शांति प्रदान करते हैं। यह साधना जीव को उसकी भौतिक व सीमित देह-बुद्धि से उठाकर अखंड आनंदमय चेतना में लीन करा देती है, जो मानव जीवन का चरम और परम लक्ष्य है।

आधुनिक युग में प्रभु स्मरण की प्रासंगिकता

इक्कीसवीं सदी के तनावग्रस्त, अति-भौतिकवादी तथा यांत्रिक जीवन में शिवपुराण का स्मरण सिद्धांत अत्यधिक प्रासंगिक है। इससे मानसिक स्वास्थ्य में सुधार होता है। निरंतर नाम-स्मरण मस्तिष्क की अनियंत्रित विचार-श्रृंखला को नियंत्रित कर सचेतन ध्यान की स्थिति उत्पन्न करता है। यह एक सर्वसुलभ साधन है। स्मरण हेतु किसी विशेष देश,

काल, पात्र, यज्ञ-कुंड या धन की आवश्यकता नहीं होती। इसे किसी भी अवस्था में किया जा सकता है। बाह्य परिस्थितियों के उतार-चढ़ाव में मानसिक स्थिरता प्रदान करने में स्मरण अत्यंत प्रभावकारी सिद्ध होता है। इससे मनुष्य को आंतरिक संतुलन प्राप्त होता है।

निष्कर्ष

शिवपुराण में वर्णित प्रभु स्मरण का भक्ति सिद्धांत केवल एक बाह्य कर्मकांड या पारंपरिक धार्मिक अनुष्ठान मात्र नहीं है, अपितु यह अत्यंत सुव्यवस्थित, वैज्ञानिक और परिपूर्ण आध्यात्मिक साधना-पद्धति है। यह सिद्धांत कर्म, ज्ञान और भक्ति का एक अत्यंत सुंदर व व्यावहारिक समन्वय प्रस्तुत करता है। शोध-पत्र के अनुशीलन से यह सिद्ध होता है कि श्रवण, कीर्तन एवं मनन रूपी त्रिधा-साधन सिद्धांत कलिकाल में चंचल चित्त वाले मनुष्यों के लिए सबसे सुलभ और प्रभावकारी मार्ग है। नाम-स्मरण तथा वाचिक, उपांशु और मानसिक जप-साधना के माध्यम से साधक धीरे-धीरे अंतर्मुखी होकर सगुण ध्यान से शिवोऽहम् की पराकाष्ठा तक पहुँचता है। आदि शंकराचार्य के अद्वैत वेदांत तथा कश्मीरी शैव दर्शन के प्रत्यभिज्ञा सिद्धांतों से समन्वित होकर यह स्मरण साधना जीव को उसके संकुचित और नश्वर दैहिक बोध से मुक्त कराकर अखंड, अनंत व आनंदमय शिवत्व की उपलब्धि कराती है। अति-भौतिकवादी एवं मानसिक तनाव से ग्रस्त आधुनिक युग में यह सिद्धांत एक प्रभावी मनोवैज्ञानिक औषधि के रूप में कार्य करता है, जो बिना किसी जटिल विधि-विधान के मनुष्य को मानसिक स्थिरता, चित्त-शुद्धि और आंतरिक संतुलन प्रदान करता है। अंततः शिवपुराण का यह संदेश अत्यंत प्रासंगिक है और भवसागर से तरने की सबसे सहज, प्रामाणिक और शाश्वत नौका है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची

1. व्यास, वेद। (2020)। श्रीशिवमहापुराण, सटीक। गोरखपुरः गीता प्रेस। रुद्र संहिता, सती खंड, 23.18
2. व्यास, वेद। (2020)। श्रीशिवमहापुराण, सटीक। गोरखपुरः गीता प्रेस। विद्येश्वर संहिता, 4.16
3. व्यास, वेद। (2020)। श्रीशिवमहापुराण, सटीक। गोरखपुरः गीता प्रेस। विद्येश्वर संहिता, 3.21
4. व्यास, वेद। (2020)। श्रीशिवमहापुराण, सटीक। गोरखपुरः गीता प्रेस। विद्येश्वर संहिता, 3.30
5. व्यास, वेद। (2020)। श्रीशिवमहापुराण, सटीक। गोरखपुरः गीता प्रेस। विद्येश्वर संहिता, 17.15
6. व्यास, वेद। (2020)। श्रीशिवमहापुराण, सटीक। गोरखपुरः गीता प्रेस। विद्येश्वर संहिता, 24.7
7. यास्क मुनि। (1998)। निरुक्तम्, पंडित छज्जूराम शास्त्री विद्याभास्कर कृत 'निरुक्तविवृत्ति' हिन्दी व्याख्या सहित। वाराणसीः चौखंबा विद्याभवन। 10.17
8. व्यास, वेद। (2020)। श्रीशिवमहापुराण, सटीक। गोरखपुरः गीता प्रेस। विद्येश्वर संहिता, 17.35-42
9. व्यास, वेद। (2020)। श्रीशिवमहापुराण, सटीक। गोरखपुरः गीता प्रेस। कैलाश संहिता, 11.13
10. व्यास, वेद। (2020)। श्रीशिवमहापुराण, सटीक। गोरखपुरः गीता प्रेस। कैलाश संहिता, 17.20-21
11. शंकराचार्य, आदि। (2014)। निर्वाणषट्कम् (आत्माषट्कम्)। स्तोत्र-रत्नावली, संपादकः पंडित रामनारायणदत्त शास्त्री 'राम'। गोरखपुरः गीता प्रेस। पृष्ठ 142–143
12. क्षेमराज, आचार्य1 (2016)। प्रत्यभिज्ञाहृदयम्। दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स.। सूत्र 1,2,9
13. उत्पलदेव, आचार्य। (2002)। ईश्वरप्रत्यभिज्ञाकारिका, आचार्य अभिनवगुप्त कृत विमर्शिनी टीका सहित। दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स। 4.2